राक्षस का भय-पंचतंत्र

एक नगर में भद्रसेन नाम का राजा रहता था। उसकी कन्या रत्नवती बहुत रुपवती थी। उसे हर समय यही डर रहता था कि कोई राक्षस उसका अपहरण न करले । उसके महल के चारों ओर पहरा रहता था, फिर भी वह सदा डर से कांपती रहती थी । रात के समय उसका डर और भी बढ जाता था ।

एक रात एक राक्षस पहरेदारों की नजर बचाकर रत्नवती के घर में घुस गया । घर के एक अंधेरे कोने में जब वह छिपा हुआ था तो उसने सुना कि रत्नवती अपनी एक सहेली से कह रही है "यह दुष्ट विकाल मुझे हर समय परेशान करता है, इसका कोई उपाय कर ।"

राजकुमारी के मुख से यह सुनकर राक्षस ने सोचा कि अवश्य ही विकाल नाम का कोई दूसरा राक्षस होगा, जिससे राजकुमारी इतनी डरती है । किसी तरह यह जानना चाहिये कि वह कैसा है ? कितना बलशाली है ? यह सोचकर वह घोडे का रुप धारण करके अश्वशाला में जा छिपा ।

उसी रात कुछ देर बाद एक चोर उस राज-महल में आया । वह वहाँ घोडों की चोरी के लिए ही आया था । अश्वशाला में जा कर उसने घोडों की देखभाल की और अश्वरुपी राक्षस को ही सबसे सुन्दर घोडा देखकर वह उसकी पिठ पर चढ गया । अश्वरुपी राक्षस ने सम्झा कि अवश्यमेव यह व्यक्ति ही विकाल राक्षस है और मुझे पहचान कर मेरी हत्या के लिए ही यह मेरी पीठ पर चढा है । किन्तु अब कोई चारा नहीं था । उसके मुख में लगाम पड चुकी थी । चोर के हाथ में चाबुक थी । चाबुक लगते ही वह भाग खडा हुआ ।

कुछ दूर जाकर चोर ने उसे ठहरने के लिए लगाम खींची, लेकिन घोडा भागता ही गया । उसका वेग कम होने के स्थान पर बढता ही गया । तब, चोर के मन में शंका हुई, यह घोडा नहीं बल्कि घोडे की सूरत में कोई राक्षस है, जो मुझे मारना चाहता है । किसी ऊबड-खाबड जगह पर ले जाकर यह मुझे पटक देगा । मेरी हड्डी-पसली टूट जायेगी ।

यह सोच ही रहा था कि सामने वटवृक्ष की एक शाखा आई । घोडा उसके नीचे से गुजरा । चोर ने घोडे से बचने का उपाय देखकर शाखा को दोनों हाथों से पकड लिया । घोडा नीचे से गुजर गया, चोर वृक्ष की शाखा से लटक कर बच गया ।

उसी वृक्ष पर अश्वरुपी राक्षस का एक मित्र बन्दर रहता था । उसने डर से भागते हुये अश्वरुपी राक्षस को बुलाकर कहा-

"मित्र ! डरते क्यों हो ? यह कोई राक्षस नहीं, बल्कि मामूली मनुष्य है । तुम चाहो तो इसे एक क्षण में खाकर हजम कर लो ।"

चोर को बन्दर पर बडा क्रोध आ रहा था । बन्दर उससे दूर ऊँची शाखा पर बैठा हुआ था । किन्तु उसकी लम्बी पूंछ चोर के मुख के सामने ही लटक रही थी । चोर ने क्रोधवश उसकी पूंछ को अपने दांतों में भींच कर चबाना शुरु कर दिया । बन्दर को पीडा तो बहुत हुई लेकिन मित्र राक्षस के सामने चोर की शक्ति को कम बताने के लिये वह वहाँ बैठा ही रहा । फिर भी, उसके चेहरे पर पीडा की छाया साफ नजर आ रही थी।

उसे देखकर राक्षस ने कहा - "मित्र ! चाहे तुम कुछ ही कहो, किन्तु तुम्हारा चेहरा कह रहा है कि तुम विकाल राक्षस के पंजे में आ गये हो ।"

यह कह कर वह भाग गया ।

.....

सुवर्णसिद्धि बोला--“ तो भाई! मुझे भी घर जाने की आज्ञा दो। तुम अपने लोभरूपी वृक्ष का फल यहाँ रहकर चखो।”

चक्रधर बोला--“भाई! यह तो बिना किसी कारण के ही हो गया।” मनुष्य को शुभ-अशुभ फल के भोग भाग्यवश भोगने ही पडते हैं। कहा गया है कि--

जिस रावण का दुर्ग त्रिकूट था, समुद्र खाई थी, योद्धा राक्षस थे, कुबेर से अटूट धन मिला था, जो स्वयं शुक्राचार्य की राजनीति का महान पण्डित था, वह भी दुर्भाग्य से विपत्ति के चक्र में पिस गया। और भी देखो कि--

अंधा, कुबड़ा और तीन स्तनों वाली राजकन्या--ये तीनों कर्म के सम्मुख उपस्थित होकर अन्याय से भी सिद्धि को प्राप्त हुए।

सुवर्णसिद्धि बोला--"यह कैसे ?"

उसने कहा--

अनुवाद - कुलदीप धर

क्षस का रूप-पंचतंत्र

एक नगर में चन्द्रसेन नाम का राजा रहता था। उसकी कन्या रत्नावती अत्यंत रूपवती थी। उसे हर समय यही डर रहता था कि कोई राक्षस उसका अपहरण न करले। उसके महल के चारों ओर पहरा रहता था, फिर भी वह सदा डर से कांपती रहती थी। रात के समय उसका डर और भी बढ़ जाता था।

एक रात एक राक्षस पहरेदारों की नज़र बचाकर रत्नावती के घर में घुस गया। घर के एक अंधेरे कोने में जब वह छिपा हुआ था तो उसने सुना कि रत्नावती अपनी एक सहेली से कह रही है "यह दुष्ट विकाल मुझे हर समय परेशान करता है, इसका कोई उपाय कर।"

राजकुमारी की बात से यह सुनकर राक्षस ने सोचा कि अवश्य ही विकाल नाम का कोई दूसरा राक्षस होगा, जिससे राजकुमारी इतनी डरती है। किसी तरह यह जानना चाहिये कि वह कैसा है? कितना बलशाली है? यह सोचकर वह घोड़े का रूप धारण करके अश्वशाला में जा छिपा।

उसी रात कुछ देर बाद एक चोर उस राज-महल में घुसा। वह वहाँ घोड़ों की चोरी के लिए ही आया था। अश्वशाला में जा कर उसने घोड़ों की देखभाल की और अश्वरूपी राक्षस को ही सबसे सुन्दर घोड़ा देखकर वह उसकी पीठ पर चढ़ गया। अश्वरूपी राक्षस ने समझा कि अवश्यमेव यह व्यक्ति ही विकाल राक्षस है और मुझे पहचान कर मेरी हत्या के लिए ही यह मेरी पीठ पर

सकता है। किन्तु अब कोई चारा नहीं था। उसके मुँह में लगाम पड़ चुकी थी। चोर के हाथ में चाबुक थी। चाबुक लगते ही वह भाग खड़ा हुआ।

कुछ दूर जाकर चोर ने उसे ठहराने के लिए लगाम खींची, लेकिन घोड़ा भागता ही गया। उसका वेग कम होने के स्थान पर बढ़ता ही गया। तब, चोर के मन में शंका हुई, यह घोड़ा नहीं बल्कि घोड़े की सूरत में कोई राक्षस है, जो मुझे मारना चाहता है। किसी ऊबड़-खाबड़ जगह पर ले जाकर यह मुझे पटक देगा। मेरी हड्डी-पसली टूट जायेगी।

यह सोच ही रहा था कि सामने वटवृक्ष की एक शाखा झुकी। घोड़ा उसके नीचे से गुजरा। चोर ने घोड़े से बचने का उपाय देखकर शाखा को दोनों हाथों से पकड़ लिया। घोड़ा नीचे से गुजर गया, चोर वृक्ष की शाखा से लटक कर बच गया।

उसी वृक्ष पर अश्वरूपी राक्षस का एक मित्र बन्दर रहता था। उसने डर से भागते हुये अश्वरूपी राक्षस को बुलाकर कहा-

"मित्र! डरते क्यों हो? यह कोई राक्षस नहीं, बल्कि मामूली मनुष्य है। तुम चाहो तो इसे एक क्षण में खाकर हजम कर लो।"

चोर को बन्दर पर बड़ा क्रोध आ रहा था। बन्दर उससे दूर ऊँची शाखा पर बैठा हुआ था। किन्तु उसकी लम्बी पूँछ चोर के मुँह के सामने ही लटक रही थी। चोर ने क्रोधवश उसकी पूँछ को अपने दाँतों में भींच कर चबाना शुरू कर दिया। बन्दर को पीड़ा तो बहुत हुई लेकिन मित्र राक्षस के सामने चोर की शक्ति को कम बताने के लिये वह वहीं बैठा ही रहा। फिर भी, उसके चेहरे पर पीड़ा की छाया साफ नजर आ रही थी।

उसे डाँटकर राक्षस ने कहा - "मित्र ! चाहे तुम कुछ भी कहो, किन्तु तुम्हारा चेहरा कह रहा है कि तुम विकाल राक्षस के पंजे में आ गये हो।"

यह कह कर वह भाग गया।

....
सर्वार्थसिद्धि बोला--"हे भाई! भूमि ही भार देने की मुख्य जड़ है। तुम अपने लोभरूपी वृक्ष का फल यहीं रहकर चखो।"

चक्रधर बोला--"भाई! यह तो बिना किसी कारण के ही हो गया।" मनुष्य के शुभ-अशुभ फल के योग भाग्यवश भोगने ही पड़ते हैं। कहा गया है कि--

जिस रावण का दुर्ग त्रिकूट था, समुद्र खाई थी, योद्धा राक्षस थे, कुबेर से अपार धन मिला था, और स्वयं शुक्राचार्य की राजनीति का महान पण्डित था, वह भी दुर्भाग्य से विपत्ति के चक्र में पिस गया। और भी देखो कि--

अंधा, कुबड़ा और तीन स्तनों वाली राजकन्या--ये तीनों कर्म के सम्मुख उपस्थित होकर अन्याय से ही सिद्धि को प्राप्त हुए।
सर्वार्थसिद्धि बोला--"यह कैसे ?"
उसने कहा--

अनुवाद – कुलदीप धर